भावनाओं के क्षितिज

काव्य संग्रह

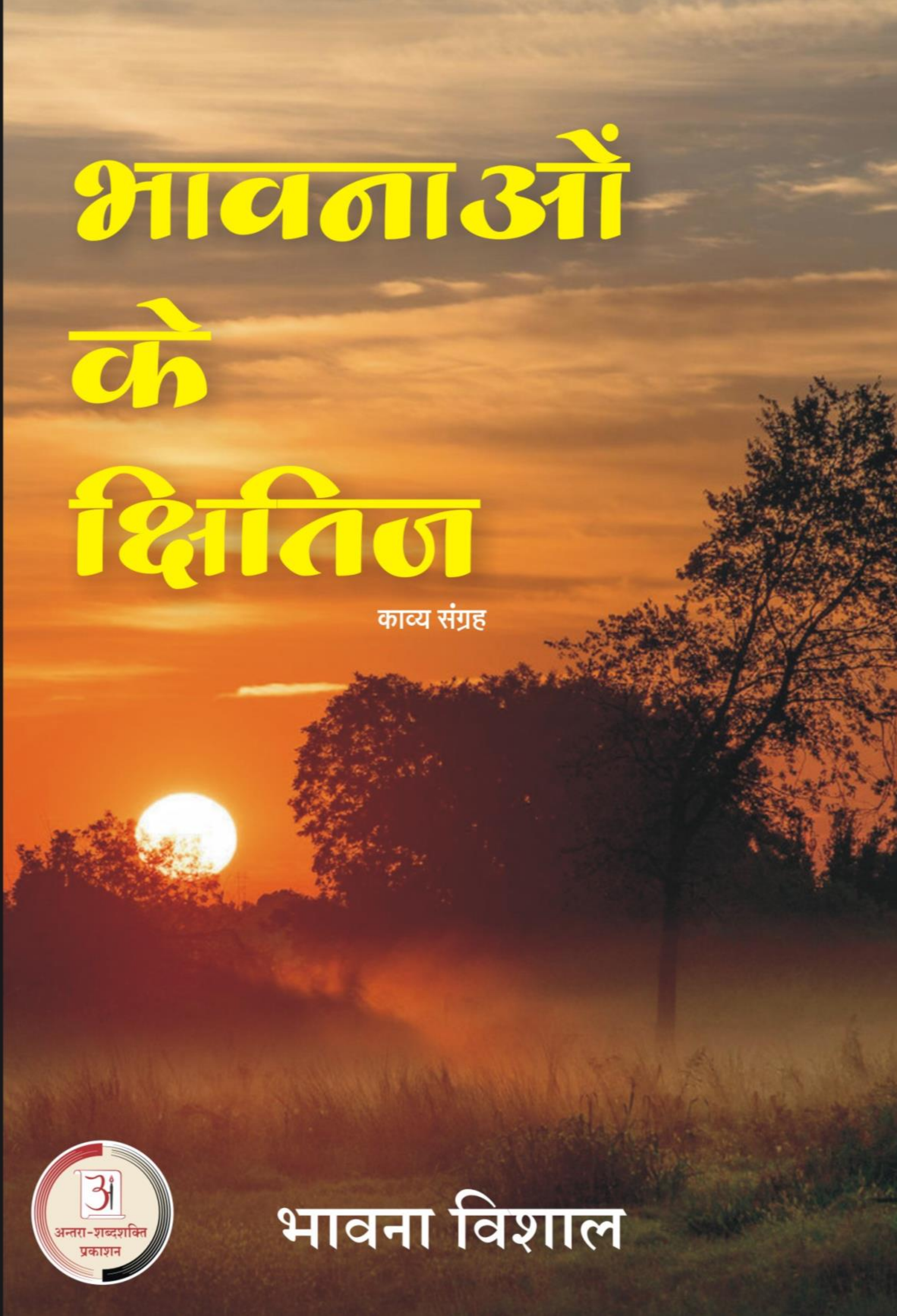

भावना विशाल

अन्तरा-शब्दशक्ति प्रकाशन

भावनाओं के क्षितिज (काव्य संग्रह)

भावनाओं के क्षितिज

(काव्य संग्रह)

भावना विशाल

अन्तरा शब्दशक्ति प्रकाशन

वारासिवनी, मध्यप्रदेश

978-93-5372-246-3
संपादक- डॉ. प्रीति समकित सुराना
तकनीकी संपादक एवं आवरण चित्र- संदीप कुमार सोनी, वारासिवनी
मुख्य कार्यालय- 15 नेहरू चौक, वारासिवनी, जिला बालाघाट (म.प्र.) 481331
मोबाईल- 9424765259. 9009465259
ईमेल- antrashabdshakti@gmail.com
वेबसाईट- www.antrashabdshakti
प्रथम संस्करण- 2020, भावना विशाल
मूल्य- 250.00 रूपये
मुद्रक- शैलू कम्प्युटर्स, वारासिवनी

THE BOOK WRITTEN BY BHAVNA VISHAL

वैधानिक चेतावनीः- इस पुस्तक का सर्वाधिकार सुरक्षित है। लेखक की लिखित अनुमति के बिना इसके किसी भी अंश को फोटोकॉपी एवं रिकार्डिंग सहित इलेक्ट्रोनिक अथवा मशीनी किसी भी माध्यम में अथवा संग्रहण और पुनर्प्रयोग की प्रणाली द्वारा किसी भी रूप में पुनरूत्पादित अथवा संचारित प्रसारित नहीं किया जा सकता है। प्रस्तुत पुस्तक की समस्त रचनाएँ लेखक द्वारा अन्तरा-शब्दशक्ति प्रकाशन को प्रेषित की गई है। अतः प्रत्येक रचना की मौलिकता के किसी भी दावे हेतु लेखक जिम्मेदार है। प्रस्तुत पुस्तक के घटनाक्रम पात्र, भाषाशैली एवं स्थान सभी लेखक की कल्पना है। किसी भी प्रकार के वाद-विवाद के लिए प्रकाशक का सहमत होना अनिवार्य नहीं है।

|| समर्पण ||

माँ

श्रीमती कुसुम मिश्रा

अनुक्रमणिका

1.	शारदे स्तुति	8
2.	मां, तुम ब्रह्मांड थी!	9
3.	हाथ में पुष्प	10
4.	वीरा तुम अब युद्ध करो	11
5.	आग्रह गीत	12
6.	धन एवं धर्म	13
7.	भूख	14
8.	कवि	15
9.	कर्म और भाग्य	16
10.	अवसाद	18
11.	मृत्यु सुनो!	19
12.	सूना लगता है	20
13.	सुई की चाह	22
14.	तुम राह मेरी आना प्रियतम	24
15.	प्रेम	26
16.	धिक्कार ऐसे धर्म को	27
17.	दिल विल तुड़वाकर बैठे हैं	28
18.	कचरा बीनती हुई लड़की	30
19.	एक कविता तुम्हारे लिए	31
20.	आमंत्रण	32
21.	मुझे चाँद नहीं चाहिए	33
22.	कलम के मूड	34
23.	मुक्त प्रेम	35
24.	नियति	36
25.	तुम रावण मार गिराओ राम	37
26.	बस यूं ही	38

27.	**तुम उस पागल शायर से कहना**	39
28.	**अनपढ़ वनवासी प्रेम**	40
29.	**प्यारी मां!**	41
30.	**मधुबन लेकर क्या घूमूं**	42
31.	**जब मैं तुम्हें पढ़ती हूँ**	43
32.	**संभव है**	44
33.	**प्रेम और कविताएं**	45
34.	**जीवन, धूप और इन्द्रधनुष**	46
35.	**स्त्री होने के दो मायने**	47
36.	**मोक्ष**	48
37.	**प्रेम-पिंजर**	49
38.	**मेरी कविताऐं**	50
39.	**विरक्ति**	51
40.	**प्रेम-और कठिनाइयाँ**	52
41.	**अलिखित प्रेम**	53
42.	**बदल जाते हैं**	54
43.	**दिसम्बर**	55
44.	**नारी मन**	56
45.	**वह प्रार्थना कहलाती है**	57
46.	**चलो ढूंढते हैं**	58
47.	**सूनापन**	59
48.	**ब्लैकहोल**	60
49.	**आज फिर**	61
50.	**तुम्हारे लिए**	63
51.	**भेड़ियों से सावधान**	65
52.	**खुद को भी थोड़ा बदलना होगा**	66
53.	**हाँ! सच है**	68
54.	**मैं, रात और नींद**	70

55.	तन का काहे अभिमान धरे	71
56.	माँ, तुम कौन हो?	72
57.	क्या बात करते हो	73
58.	क्या हर्ज है	74
59.	ये मैंने सुना है	75
60.	मुश्किल क्या है	75
61.	लगन	76
62.	इक खत तुम्हारे लिए	77
63.	कौन?	78
64.	पढ़ रहे हो	79
65.	कहाँ रह गया आखिर?	80
66.	नवंबर	81
67.	एक समय के बाद	82
68.	कम से कम	83
69.	पानी बिना	84
70.	तुम स्वाधीन हो	86
71.	कोई बात नहीं	88
72.	दिल टूटा फूटा है रखोगे क्या?	89
73.	मैं जब लिखूं	90
74.	ये हाहाकार क्यों है?	91
75.	आत्म	92
76.	क्या है?	93
77.	तुम मिल जाओ ना	94
78.	यह कौन गीत गा रहा है?	95
79.	प्रेम-कविता	96

भूमिका

श्रीमती भावना विशाल का यह पहला कविता संग्रह उनकी मां के पार्थिव देह का के पंचमहाभूत में समाहित होने के बाद उनके वात्सल्य की यादों में स्वयं के अन्वेषण का उनका प्रयास है। उनके व्यक्तित्व में छिपी कवयित्री का अनुसंधान इस काव्य के रूप में प्रकट हुआ है।

जिस प्रकार वाल्मीकि का पहला छंद अचानक ही कौंच पक्षी की पीड़ा को आत्मानुभूति देता हुआ प्रकट हुआ था, उसी प्रकार कवयित्री की आत्मानुभूति की गहराई व्यक्तिगत सीमाओं को पार कर सामाजिक अनुभूतियों को छूने लगी, और उनका पुनर्जन्म काव्य की कोख से हुआ है।

इनकी कविताओं में विचारों का दासत्व नहीं है अपितु उन्होंने नई दिशाओं की खोज की है। कहीं नारीत्व को झूठे संस्कारों परंपराओं की बेड़ियों में जकड़े पाया तो कविता 'अवसाद....' के रूप में नारीत्व का विरोध दर्ज कराया है जो समाज की व्यवस्था पर व्यंग्य है ठीक ऐसा ही व्यंग्य 'कचरा बीनती हुई लड़की' में समाज के दोगलेपन पर कवयित्री ने दिखाया है।

इनके काव्य संग्रह में बालक की चंचलता का आभास है तो कहीं अभिमन्यु की तरह चक्रव्यूह में उलझे हुए आधुनिक मानव का चित्र है, कहीं प्रेम की निश्चलता, समर्पण और कहीं आध्यात्मिकता दर्शन देती है। साथ ही यह कविताएं पाठक को यह सब खोजने की प्रेरणा देती सी प्रतीत होती हैं।

पुस्तक की भाषा कवयित्री ने सरल रखी है लेकिन भाव गहरे तक डूबे हुए हैं। जहाँ आधुनिक पाठक के लिए हिंगलिश कविताएं भी इन्होंने रखी है साथ ही इनके काव्य संग्रह में 'ग़ज़ल का सफर' एक भाग है। उसके अतिरिक्त गीत हैं, तुकांत-अतुकांत कविताएं भी हैं।

इनकी कविताओं को पढ़कर मुझे लगता है कि साहित्य एवं लेखन के क्षेत्र में इनका भविष्य उज्जवल है।

श्रीमान् मुकेश जी नैन
सांख्यिकी विभाग
राजस्थान

शारदे स्तुति

मां शारदे उपकृत करो
निज दोष सब विस्मृत करो
निज तूलिका में ओज दो
जग कल्याण की नई सोच दो
चित्त ज्ञान से आवृत करो
मां शारदे उपकृत करो
मां दीन हूं मैं कर्म से
ना विमुख होऊं धर्म से
मद-मोह से निवृत करो
मां शारदे उपकृत करो
मां करो दया इस दास पर
जीवन सकल तेरी आस पर
आशीष दो, अनुकृत करो
मां शारदे उपकृत करो
मां धैर्य दो, सतत् लिखूं
छल से परे हो सत् लिखूं
सत् से वर्ण झंकृत करो
मां शारदे उपकृत करो

मां, तुम ब्रह्मांड थी!

भोर की पहली किरण सी
उजली और प्रकाशमान थी
मां तुम ब्रह्मांड थी
जैसे किसी तारे के चारों ओर
घूमता है सौरमंडल सारा
उस तारे की ही ऊर्जा व ऊष्मा से
जीवन पाता है
ठीक वैसे ही मां
तुमसे, तुम्हारे ही गुरुत्वाकर्षण से
मेरे क्षण-क्षणिकाएं चलायमान थी
मां तुम ब्रह्मांड थी
रसोई की स्वाद सरिता से लेकर
घर की बगिया में खिली नाग चंपा तक
ठाकुर द्वारे पर चढ़ते पुष्पों में
या मेरे बालों की कसकर गुंथी चोटी में
घर भर की पहरावन-बिछावन को जोड़ती
तुम हर सिलाई-टांके में विद्यमान थी
मां तुम ब्रह्मांड थी
मां तुम बिन
सब मौसम मानो अपना सलीका भूल गए हैं
छत की ठंडी हवा
सुबह में अब हाड़ को चुभती है
सर्दियों की धूप भी तन को जलाने लगी है
दीवाली का दिपदिपाना कम है
तीज त्योहारों की चमक भी मद्धम है
मास, दिवस, ऋतु, पर्व में माँ तुम ही चेतन प्राण...!

हाथ में पुष्प

हाथ में पुष्प पुष्प के रंगों के समान
कल्पनाओं के बहुरंगी आयाम है
हाथ में पुष्प प्रणय की कोमल आशाएं हैं
प्रेम का प्रतीकात्मक प्रदर्शन है
हाथ में पुष्प शोक में डूबे मन का सूचक है
दिवंगत के प्रति श्रद्धा और स्मृतियों का दर्पण है
हाथ में पुष्प =भक्ति का चिन्ह है
ईष्ट को आस्था व स्नेह पूर्ण नमन है
हाथ में पुष्प लिए
किंतु मैं सोचती हूं
उस पुष्प का छिटकना अपनी डाल से
संभव है वायु का तीव्र प्रवाह रहा हो
या किसी की स्वार्थ पूर्ण लालसा
या डाल से यूं ही
टूटकर आ गिरा हो मिट्टी में
.....बस काल के प्रभाव से
यह पुष्प ओतप्रोत है
कोमलता और सुगंध से
पर आ गिरा है भूमि पर
भाग्य के किसी प्रबंध से
हाथ में पुष्प
मेरे मन में स्रोत है विरक्ति का
हर गुणधर्म परे रह जाता हैं
हर सौन्दर्य मौन हो जाता है
एक पुष्प की भांति यह चेतन देह...!

वीरा तुम अब युद्ध करो

तुम शक्ति हो स्वीकार करो
दुर्गा का तुम अवतार धरो
यह पीड़ यूँही ना जाएगी
निज पीड़ा तुम खुद ही हरो
जोहरा तुम अब युद्ध करो, वीरा तुम अब युद्ध करो!
घात शत्रु की समझो अब
इस मरीचिका में मत उलझो अब
यूं प्रतिक्षण मरना उचित नहीं
उठो वीरगति का मार्ग चुनो
जोहरा तुम अब युद्ध करो, वीरा तुम अब युद्ध करो!
ममता की मीठी बानी हो
तुम दादी नानी की कहानी हो
पर कोमलता को त्यागो अब
रण चंडी का तुम रूप धरो
जोहरा तुम अब युद्ध करो, वीरा तुम अब युद्ध करो!
विनती से या मनुहारो से
यह युद्ध न जीता जाएगा
छलनी हिय से जो निकलेगा
वह बाण न रीता जाएगा
इन महिषासुरों की छाती पर
फिर दुर्गा बनके पैर धरो
जोहरा तुम अब युद्ध करो, वीरा तुम अब युद्ध करो!

आग्रह गीत

खुद पर किंचित संशय रखना
त्रुटि होने का थोड़ा सा भय रखना
यह भय कदाचित तुमको थोड़ा सा राम रखेगा
देगा अवसर आत्मावलोकन का
दुर्गुणों पर भी विराम रखेगा
किंतु संशय की धारा में
पूर्णतया ना बहना तुम
यह सरिता है स्वपरीक्षण की
इसके तट पर ही बैठे रहना तुम
रखना सगर्व स्वाभिमान सदा
दृढ़ संकल्प चैतन्य हो बुद्धिमान सदा
क्षीणताओं का अंतर्मन की
यदि तुम्हें भान रहेगा
प्रतिक्षण प्रज्वलित अंतर में
प्रतिबिंबित फिर ज्ञान रहेगा
आकांक्षाओं के अश्व की कस कर लगाम रखना
कर्मरत होकर सदा वृत्ति निष्काम रखना
फिर भी दुराचार दुस्साहस का
प्रतिकार निर्भय रखना
खुद पर किंचित संशय रखना
त्रुटि होने का भी भय रखना!

धन एवं धर्म

धन के स्तंभों पर टिके
विलासिता के
ऊंचे ऊंचे प्रासादों में
पला करते हैं
मात्र दोष
जीवन की इस
मन-लुभावनी वीभत्सता से
जन्म लेती है कुरूपताएं
चरित्र की,
आचार की,
विचार की
ऐसी साज सज्जा से
धर्म रहता है सदैव ही दूर
उपेक्षित....अप्रकाशित
किसी परित्यक्त पुरातन वस्तु के समान।

भूख

भूख के प्रचंड वेग में
बहुधा ही बह जाते हैं
मनुष्य के आदर्श
नीति, तर्क, चिंतन
भूख का दावानल
जहाँ विस्तार पाता है
वहाँ भक्षण कर लेता है
अन्न का, धान्य का
उर्जा का, उष्मा का
बोध का, ज्ञान का
धर्म का सत्व का
और तदुपरांत.....मनुष्य के चरित्र का ।

कवि

क्या अनुमान है तुम्हें
कवि होने में भी
एक बड़ा लाभ है
वह यह कि
अब विचार तुम्हारा पीछा नहीं करते
अपितु तुम
विचारों का पीछा करते हो
साहित्य के इन
तुच्छ सेवको को
विचार नहीं घेरा करते
कि जिससे
वे हमारे मन को उलझा सके
वरन् कलम के प्रकाश में
हम ही समेटते हैं
इन विचारों को
कि जिससे
इन्हें शब्दों में पिरोकर-बुनकर
निर्माण कर सकें
नित्य नवीन कलाकृतियों का....!

कर्म और भाग्य

कर्म और भाग्य
यदि परस्पर पूरक हो जाते हैं
जीवन की गणित में तब
एक और एक ग्यारह बनाते हैं
भाग्य नहीं अपने वश में
ईश्वर का विधान है यह
ना नियंत्रण नर का कोई
प्रारब्ध का प्रदान है यह
किंतु जो वश में है
वह मानव के अपने कर्म है
अपने कर्म को करते जाना
सहज स्वाभाविक धर्म है
सत्कर्म की राह पर चलकर
हम सौभाग्य को भी पा सकते हैं
खेलकर पुष्पों सा भव उपवन में
हर जीवन में महका सकते हैं
आओ हम आशाएं चुन लें
पर ना रहे भरोसे भाग्य के कभी
हम कर्म करें,विनम्र रहें
सुख सच्चा होगा साध्य तभी!

अवसाद

जीवन से भरपूर
उन्मुक्त गगन की
वह भी अधिकारी थी
उदीयमान सूर्य सी उर्जित, प्रकाशित
अधखिले कुसुमदलों सी
कोमल और प्यारी थी
झूठी परंपराओं के नाम पर
दासता का पाठ
उसे पढ़ाया गया
देकर संस्कारों की दुहाई
पल-पल घुटना
उसे सिखाया गया
बताया गया उसे
कि भला-बुरा, गलत-सही
सब कुछ मुस्कुरा कर
उसे सहना है
हो कोई दुख, पीड़ा, अन्याय, अधर्म
उसे चुप ही रहना है
कुछ नहीं कहना है
और यह कि उसके सपने
सपने नहीं, महज कल्पनाएं हैं
उसकी प्रतिभा शून्य है
और इच्छाएं उसकी
मात्र प्रवंचनाएं हैं

ऐसे ही एक दिन
इस गुलामी को सहते हुए
होठों को सिल कर
चुपचाप खामोश रहते हुए
उसके दिल में कोई
जहरीला धुआं सा फैलने लगा
खिंच गई जमीन पैरों तले से
कोई उसको पीछे धकेलने लगा
वह गिर गई अंधेरों में
तब पहली बार
उसकी पीड़ा को, पीड़ा माना गया
खो गई वह निराशा में
और उसकी बीमारी को
'अवसाद' के रूप में पहचाना गया!

(यह कविता मेरी अंग्रेजी कविता
'And depression was found'
का अनुवाद है)

मृत्यु सुनो!

सुनो मृत्यु!
जिस क्षण ये पृथ्वी
अपने महाप्रयाण को उद्घत होगी,
समस्त जीव जगत
अन्तिम आहूति का गान करेगा,
उस क्षण भी
ढेरों आकाशगंगाओं से परे
मेरे शब्द गुंजायमान होंगे,
नवगीत बनेंगे
किसी सृष्टि के
नव सृजन के,
निश्चित ही
वही मेरी रचनाशीलता की पराकाष्ठा होगी
अंधकार जब अपनी
सघन पद चाप तले
रौंद देने को तत्पर होगा
सूर्य के अस्तित्व से जुड़ी
समस्त आशा प्रत्याशाओं को
तब भी मेरे गीत
किसी निर्भीक दीपक के समान
सहसा ही टिमटिमाएंगे
राह में तन कर खड़े
किसी सूखे बरगद की कोटर तले
हाँ, वही मेरी रचनाशीलता की पराकाष्ठा होगी।

सूना लगता है

कभी-कभी एकांत क्षणों में
जीवन सूना लगता है
धुंधला जाते हैं भाव सभी
यह मन सूना लगता है

जिस मां से जीवित थे सारे
मंदिर, चौका-चूल्हा, बगिया
उस मां के बिन घर-द्वार, बगीचा
आंगन सूना लगता है

ढोते हैं बड़ी बड़ी भारी
उम्मीदों को नाजुक कंधों पर
भारी बस्तों के बोझ तले
अब बचपन सूना लगता है

सिंगार पिया का रचा ना हो
गर तन-मन में, चितवन में
और नैनन में साजन न दिखें
तो दर्पण सूना लगता है!

सुई की चाह

बेहद महीन मैं
अथाह विस्तारित
प्रतिपल गतिमान संसार में
अस्तित्व विहीन
मैं, एक बारीक सुई
सृष्टि के इस कोलाहल में
माना मैं लघु से लघुतर हूं
किंतु मन में मेरे भी
उठता है कामनाओं का ज्वार

ना चाह मुझे
कि कूद पड़ू
अस्तित्व की घटती बढ़ती
परछाइयों के इस समर में
किंतु यह लालसा है कि
कोई भी आहत ना हो
मेरे किसी भी कर्म से

मैं संग रखूं केवल प्रेम को
जिससे मैं बांध संकू
अपने भीतर बाहर की
हर ऊंच-नीच,जात-पात
धर्म-मजहब, रहन-सहन को
एकता के सूत्र में

यदि हो सके तो हर सकूं
हर किसी की पीड़ा को
जीवन पथ पर चलते चलते
कांटो ने छलनी किया हो
कोई उठता कदम
तो बन सकूं मैं मुक्ति/राहत

नहीं है कोई अभिलाषा मुझे
बड़े नाम की,पहचान की
हां कामना है कि
जीवन के ताने-बाने पर
यदि चलूं
तो सुंदर चित्रों की
अगवाई करूं
किसी कमीज के बटन की तरह
टांक दूं प्रेम ही प्रेम
जीवन के पटल पर

मैं, एक छोटी सी सुई
नहीं होना मुझे
पर्वत के समान
बस चलना है मुझे
ऐनक लगी
दो आंखों के तले,
कभी किसी प्रेमी के
रुमाल के आर-पार
और उकेरने हैं
सुंदर रंग जीवन के!

तुम राह मेरी आना प्रियतम

तुम राह मेरी आना प्रियतम
मैं दीप जगा कर रखूंगी
पद कमल तुम्हारे मलिन ना हो
मैं हृदय बिछा कर रखूंगी

मिलन यामिनी के हेतु
सौ चांद उगा कर रखूंगी
प्रेम के सोलह सिंगारों से
तन-मन को सजा कर रखूंगी

तुम धर्म हो मजहब हो मेरा
मैं तुम्हें निभा कर रखूंगी
तुम देव हो मेरे स्वामी हो
मैं तुम्हें रिझाकर रखूंगी

हर वचन मधुर प्रणय का मैं
फिर से दोहरा कर रखूंगी
यह पहर न बीते जल्दी से
मैं पल ठहरा कर रखूंगी

मन में संशय जितने भी हैं
उनको मैं भुला कर रखूंगी
मैं प्रेम तुम्हारे में अपना
विश्वास टिका कर रखूंगी

चंपा मोगर जूही की वेणी
जूड़े में सजा कर रखूंगी
बाधा न बने घुंघरू इसके
पायल धमका कर रखूंगी

तुम भाप न लो भावों को मेरे
घूंघट सरका कर रखूंगी
मैं मौन तुम्हारा समझ सकूं
यह खुद को सिखा कर रखूंगी

प्रीत तुम्हारी से अपना
जीवन महका कर रखूंगी
ये जन्म जन्म का साथ अपना
हर जन्म निभा कर रखूंगी

तुम राह मेरी आना प्रीतम
मैं दीप जगा कर रखूंगी
पद कमल तुम्हारे मलिन ना हो
मैं हृदय बिछाकर रखूंगी!

प्रेम

कोई तुमसे कहे
कि वह प्रेम में
तुम्हारे जीवन को
स्वर्ग बना देगा तो क्या लाभ?
यूं बिना बात
स्वर्गवासी हो जाने का क्या तात्पर्य?

कोई तुम्हें कहे
कि वह तारे तोड़ कर लाएगा
तुम्हारे प्रेम में,
तुम्हारे लिए
तो यह जोखिम किस काम का?
एक तेज गति से घूमते,
जलते हुए नक्षत्र का
भला क्या उपयोग ?

कोई तुम्हें कहे
कि वह तुम्हारे प्रेम में
मर जाएगा
तो ऐसे मृत व्यक्ति के साथ
कितने समय तक
निर्वाह संभव है?

प्रेम स्वर्गीय हो जाने में नहीं
स्वर्ग के समान सुखों में है
प्रेम किसी उल्कापिंड के
धरती पर आ गिरने में नहीं,
ना ही किसी निर्जन ग्रह पर
भ्रमण में है
प्रेम तो तुम्हारे आसपास
असंख्य के नक्षत्रों के समान
टिमटिमाती उज्जवल अभिलाषाओं में है,
प्रेम मृत्यु या उसके प्रदर्शन में नहीं
प्रेम तो जीवन के हर श्वास में है
तुम्हारे भीतर आती-जाती
प्राणवायु में एवं
हृदय के प्रत्येक स्पंदन में है
प्रेम पुष्प में नहीं,उसकी सुगंध में है
प्रेम बादल में नहीं,वर्षा में है
प्रेम श्रृंगार में नहीं,लज्जा में है

ठीक वैसे ही
प्रेम कहना नहीं है,
शब्द भी नहीं है,
प्रेम तो करना है,
होना है
और इस होने को
शब्दों से परे समझना भी....... प्रेम ही है

धिक्कार ऐसे धर्म को

बस ग्रंथों में ही दबा रहे
देवालय में जो छुपा रहे
यदि करनी पर ना छा पाए
मानवता ना समझा पाए
प्रेरित ना करे सत्कर्म को
धिक्कार है ऐसे धर्म को
जो समझे ना धर्म के मर्म को

जो दीन दुखी की ना सोचे
रोते के आंसू ना पौंछे
जिसमें बूढे घर बेघर हो
बाहर ही हो, जो ना भीतर हो
सहेजे ना आंख कि शर्म को
धिक्कार है ऐसे धर्म को
जो समझे ना धर्म के मर्म को

मानव यदि पशु ही बना रहे
लक्ष्य मात्र हित साधन अपना-अपना रहे
यदि सद्गुण मात्र दिखावा हो
सब आडंबर हो छलावा हो
बदला जाए यदि धर्म को
ज्यों सर्प बदलता चर्म को
धिक्कार ऐसे धर्म को
जो समझे ना धर्म के मर्म को!

दिल विल तुड़वाकर बैठे हैं

मत पूछो इस वीकेंड हम अपनी
नींदे उड़वा कर बैठे हैं
बिन बात खामखा ही अपना
दिल-विल तुड़वा कर बैठे हैं

कहते हैं लोग, चांद हैं हम
उफ़! हाय कयामत ये गुजरी
लिस्ट में उसके चकोरों की
नाम अपना जुड़वा कर बैठे हैं,....हम दिल तुड़वा कर बैठे हैं

बस नजर हटी दुर्घटना घटी,
सम्हले जब तक,थी पतंग कटी
अब नाम पे उसके,दिल की किताब का
पन्ना मुड़वा कर बैठे हैं,....हम दिल तुड़वा कर बैठे हैं

इक हाथ छुड़ाया था खाली
सोचा था फक़त हाथ ही है
वो हमसे गुल,नगमें,झांझर
सब कुछ छुड़वा कर बैठे है,....हम दिल तुड़वा कर बैठे हैं

कल जाम उठाया था उसने
नाम का मेरे, सुनते हैं
कोई उनसे कह दो अपनी हम
मैय्यत उठवा कर बैठे हैं,
बिन बात, यूं ही बैठे ठाले, दिल-विल तुड़वा कर बैठे हैं

कचरा बीनती हूई लड़की

सुबह के आधे गहरे
आधे उजले
संक्रमण काल में
कचरा बीनती हुई वो लड़की
किसी उजाड़ भूली हुई सभ्यता के
अंश के समान नजर आती
ये कचरा बीनने वाली लड़की
ये बीनती है कचरा
स्वच्छता के दंभ से भरी
कॉलोनियों से,
कभी-कभी कचरे की बीच से
या आसपास से
निकल आते हैं कुछ सांप बिच्छू
और उनके दंश से
दुखता है उसका तन मन,
इन्हीं कचरो में छिपे
कुछ जहरीले कीड़े
अक्सर लद जाते हैं
उसकी पीठ पर जबरन
और फिर यहां वहां,
रोज बरोज पीछा किया करते हैं उसका
अपनी मियादों के पूरा होने तक,
वैसे कुछ कुत्ते भी हैं इन गलियों में
जो सुनसान रास्तों पर
उसे अकेला आता देख भौंकते हैं....
उनका भौंकना,
कोई पीड़ा तो नहीं देता

हां, मगर तंग बहुत करता है,
लेकिन फिर भी वो लड़की
निकल ही आती है,
उन्हीं गलियों में फिर से
शायद मानव अधिकारों की कोई पाती
उस तक पहुंची नहीं
शायद उन झुग्गियों में
उसका पता लापता है,
ना ही उसने महिला सशक्तिकरण,
संबलन या नारी चेतना के व्याख्यानों को
पढ़ा है ढंग से
लगता है शायद उसे पढ़ना नहीं आता,
उस युग से इस युग तक की
सभी क्रांतियों से
बहुत दूर है वो अब तक
इस प्रगतिशील दुनिया में
किसी अनचाहे कचरे की तरह
एक मैली उपेक्षित दुनिया से रोज आती है
और बीन कर इस कचरे को
वापस कचरे में ही मिल जाती है,
लेकिन प्रश्न यह है कि
स्वच्छता के पुरस्कारों हेतु नामांकित
इन समाजों में
आखिर कहां रह जाता है यह कचरा?
जिसे बीनते हुए कहीं ना कहीं
दिख ही जाती है
वो कचरा बीनती हुई लड़की!

एक कविता तुम्हारे लिए

एक कविता
निकाल के रखी है
तुम्हारे लिए
कविताओं के
बेतरतीब गुच्छे से
जब सौपूंगी
मैं तुम्हें
वो वनवासी प्रसून
तो संभव है
तुम झटक कर
गिरा दो उसे
किन्तु तब भी
तुम्हारे हाथों में
रह जाएगी
महक मेरे
शब्दों की
और तब
स्वतंत्र हो जाएंगी
प्रयोजन से
मेरी सभी चेष्टाएं
और मुक्त हो जाएंगी
तुम्हारी हथेलियों में बसकर
या चरणों में गिरकर।

आमंत्रण

श्वास की धुरी पर
तीव्र गति से घूमते
जीवन के किसी क्षण में
सहसा ही लगने लगता है कि
जैसे कुछ उपेक्षित है,
वो जो शायद सर्वाधिक आवश्यक है
जैसे कहीं पहुंचना है हमें
और हम अभी चले ही नहीं
चलना तो दूर
मार्ग तक जाना नहीं
जैसे कोई परीक्षा आन पड़ी हो सर पे
और कुछ पढा ही न हो
पढ़ना तो दूर
पुस्तक तक देखी नहीं
जैसे किसी विशिष्ट से होनी हो भेंट
और उसके बारे में कुछ ज्ञात ही न हो
उसको जानना तो दूर
स्वयं का परिचय तक पाया नहीं
ये जो दबाव है
अकस्मात का प्रभाव है
ये जो आत्मसंशय है
अज्ञात ही भय है
ये पुकार है, संकेत है, आमन्त्रण है
अजर, अमर को
उसका जो
असीम है, अव्यक्त है, अनन्त है,......अक्षय है।

मुझे चाँद नहीं चाहिए

बोनफायर की हल्की हल्की तपिश,
कोई पुरानी फिल्मी धुन,
तुम.... और दूर तक खामोशी चाहिये
सुनो!.... मुझे चाँद नहीं चाहिए।
खिड़की से होकर आती
मोगरे के फूलों की
भीनी भीनी खुशबू,
नर्म लिहाफ में बैठे हुए
दुनिया भर की गुफ्तगू
और मेरी चटर-पटर के बाद आई
तुम्हारे होंठों पे वो हल्की सी हंसी चाहिए
सुनो.... मुझे चाँद नहीं चाहिए।
सर्द धुंधले मौसम में
मेरी ख्वाहिशों के गुलाबों को
उगने, पनपने, खिलने के लिए
तेरे ख्वाबों की
नर्म गुनगुनी जमीं चाहिए
सुनो.......मुझे चाँद नहीं चाहिए।

कलम के मूड

किस्से, कहानियां, कवितायें
ये सभी शायद कलम के मूड होते हैं
कैसे कभी इक आम सी हरकत पे
आकर जुटने लगते है शब्द
मौसम भी हल्की सी करवट
मन थिरकने लगता है,
और थिरकने लगते हैं काफिये
तुकबन्दी की ताल पे
कभी तो इक बारीक सा रिसाव
अतीत के आड़ोलित अक्सों का
झर झर कर बहने लगता है,
पन्ने दर पन्ने,
पक्ति दर पंक्ति
और कभी अचानक यूं ही ठिठक जाती है कविता
पहली ही पंक्ति में
लाख खींचो, सींचो, मगर घटती ही नहीं
मन में दबा हूआ बीज
प्रस्फुटन ही न पालने पाता हैं
दिन-रात, पहरो पहर
कलम की यायावरी का चरम भी
अपने चरम को छूता हैं
किन्तु कलम का चित्त भी
कहीं टिकने ही न, पाता हैं
भटकती है कलम और भटकते हैं विचार
मैं सोचती हूँ कभी-कभी
हाँ, कलम भी खानाबदोश होती है।

मुक्त प्रेम

क्या कहते हो तुम
कि प्रेम आसक्ति है?
भला प्रेम
आसक्ति कैसे है
प्रेम तो विरक्ति है
मोक्ष है
प्रेम आनंद की ओर,
अनंत की ओर
राजमार्ग है
क्योंकि जहाँ
प्रेम का प्रारंभ है
वहाँ अपेक्षाओं का अंत है
एवं जहाँ अपेक्षाओं का अंत है
.......वहीं पर मुक्ति है।

नियति

तुमने युद्ध को साधा
शस्त्रों का ही निर्माण किया
तुमने विलासिता को
लक्ष्य बनाया
महत्वाकांक्षा को
सर्वस्व मान लिया
किन्तु तुम भूल गये
जीवन के
आधार रूप को
न्यूनतम के नियम को
और अकस्मात ही
नियति ने
तुमसे छीन लिया
सारा भोग विलास
और तुम चल पड़े
आज्ञाकारी बालक के समान
दोनो हथेलियों के मध्य
सुरक्षित रखते हुए
जीवन की लौ
तुमने छोड़ दिया
अंततः अपने
हथियारों को
जंग लगने के लिए,...!

तुम रावण मार गिराओ राम

हे राम!
अधर्म-पाप के भार से विचलित,
अवनि को मुक्त कराओ राम,... तुम रावण मार गिराओ राम।

ऐसे नीच-अधर्मी दानव,
अक्सर भेष बदलकर आते हैं,
अपनी माया की प्रवंचना से,
सीता को हर ले जाते हैं,
कुछ और न सोचो, सीधे तुम,
नाभि पर बाण चलाओ राम,... तुम रावण मार गिराओ राम।

सत्य-असत्य के युद्‌ध में किंचित,
सत्य न डिगने पाएगा,
रण में यदि रावण-राम हुए तो,
रावण ही मारा जाएगा,
करके वध रावण का जग में,
सत्य की जोत जगाओ राम,... तुम रावण मार गिराओ राम।

रघुवर! तुम्हारी विजय कथा,
युग-युग तक गाई जाएगी,
अन्याय के अंत की यह लीला,
सदियों दोहराई जाएगी,
मर्यादा के विजय पर्व का,
प्रतीक तुम बन जाओ राम,... तुम रावण मार गिराओ राम।

आज भी जाने कितनी सीता,
रावण के वश में हैं, पीड़ित हैं,
लगता है पूरा मरा नहीं,
रावण बाकी है, जीवित है,
करने को अंत दशानन का, पुनः धरा पर आओ राम,
तुम रावण मार गिराओ,.... अब रावण मार गिराओ राम।

बस यूं ही

हाँ मैं लिखती हूँ,
कई दफा तुमको,
कई बातें तुमको,
लिखती हूँ और
मिटा देती हूँ,
जब मेरी झिझक
मुझसे हाथ छुड़ा कर
छिप जाती है,
मेरे ही मन की किसी ओट में,
और मैं उसे देखती हूँ बस,
और देखती हूँ
अपना ही लिखा,
नापती-तौलती हूं,
तर्क-वितर्कों से,
संकोच-संशयों से,
बस इन्ही मानदण्डों में
उलझ के रह जाती है
हर बार, हर बात
चक्रव्यूह में फंसे
अभिमन्यु की तरह!

तुम उस पागल शायर से कहना

पायल अब
चुप चुप रहती हैं
गुमसुम से
रहते हैं ये नैना
तुम उस
पागल शायर से कहना
उसके गीतों की
मुक्त सलिल संग
सुरभि बनकर
मुझको है बहना
तुम उस
पागल शायर से कहना
साहिल की
गीली रेत पे मैं
उसके नाम के
हरफे लिखती हूँ
तुम उस
पागल शायर से कहना
उसकी खामोश
निगाहों को अक्सर
आंखों से सुना करती हूँ
तुम उस
पागल शायर से कहना।

अनपढ़ वनवासी प्रेम

प्रेम की प्रवृत्ति भी
बहुधा किसी अनपढ़
गंवार सी होती है
तुम जो समझाओ
समझ लेगा
जो दिखाओ
वही देखेगा
तुम विश्वास करने को कहो
वह अंधविश्वास करने लगेगा
तुम दास बनाना चाहो
वह आजीवन
बंधुआ मजदूर बना रहेगा
किन्तु क्या तुम्हें पता है?
जब भी तुम
उसकी आंखो में देखोगे
प्रेम तुम्हें सम्मोहित कर लेगा
वश में ले लेगा
कहते हैं
प्रेम के दुर्गम बीहड़ो में
सम्मोहन और समर्पण की
अनेक पाठशालाएं हैं
प्रेम शिक्षित नहीं
किन्तु दीक्षित अवश्य है।

प्यारी मां!

प्यारी मां!
तुम बिन जीवन
बहुधा ऐसा लगता है
जैसे कोई बुरा सपना देख रही हूँ मैं
जैसे मानो किसी और के घर पर हूं
हर जगह एक अकेलापन है
परायापन है
लगता है मानो
किसी बहुत बड़ी
परीक्षा की तैयारी जुटी हूं
लेकिन मां यह सपना
टूटता ही नहीं
तुम मुझे जगाती क्यों नहीं?
इस ठौर मेरा पड़ाव
पूरा होता ही नहीं
तुम मुझे घर बुलाती क्यों नहीं?
माँ ना परीक्षा पूरी होती है,
ना ही ये सब आयोजन ही
किन्तु मेरे भीतर का अबोध बालक
हर पल तुम्हारी राह तकता है
तुम कब आओगी मां?

मधुबन लेकर क्या घूमूं

पाषाणो की बस्ती में
जीवन लेकर क्या घूमूं

जिस मन को कोई समझे ना
वो मन लेकर क्या घूमूं

जिस तन से कोई आस नहीं है
वो तन लेकर क्या घूमूं

जिन कुंजो में छांव नहीं
तो मधुबन लेकर क्या घूमूं

जो यौवन गोकुल में ना खिला
वो यौवन लेकर क्या घूमूं

जहाँ न तुलसी महकी हो
आंगन लेकर क्या घूमूं

इसमें हरि का है बिम्ब नहीं
चितवन लेकर क्या घूमूं

जिन नैनन में तुम न दिखो
तो दर्पण लेकर क्या घूमूं

जब मैं तुम्हें पढ़ती हूँ

सुनो, जब मैं तुम्हें पढ़ती हूँ
तब तुम्हारे लिखे हर शब्द में
मैं इक नयी छवि
तुम्हारी गढ़ती हूँ
मैं जब डूबती हूँ
तुम्हारे भावों में
बस वहीं पर उबरती हूँ
तुम्हारे रचे वर्ण सरोवर में
इस पार से उस पार
उस पार से इस पार
फिर-फिर बहा करती हूँ
जब मैं तुम्हें पढ़ती हूँ
यूं लगता है
जैसे जग पीछे रह जाता है
केवल मैं ही
आलंबन की आशा धरे
किसी बेल सी
निरंतर तुम्हारी ओर बढ़ती हूँ
यद्यपि ये सहज नहीं
किन्तु सुनो, जब मैं तुम्हें पढ़ती हूँ
तो बार बार पढ़ा करती हूँ।

संभव है

संभव है कि
तुम मेरा चेहरा
मिटा दो
यह भी संभव है कि
तुम मेरी आवाज़
दबा दो
परन्तु फिर भी
मेरे शब्द
रह रह कर उभरेंगें
तुम्हारे मस्तिष्क पटल पर
मेरी कवितायें
गुंजायमान रहेंगी
तुम्हारे भीतर....बाहर
और तब
तुम्हें खोजना होगा
कोई बेहतर उपाय
मुझे विस्मृत करने के लिए।

प्रेम और कविताएं

प्रेम कविताएं नहीं बुनता
प्रेम तो डुबो लेता है
रास्ते में आई हर
पगडंडी को,देवले को
उंची नीची भूआकृतियों को
हाँ मगर जब
प्रणय के मेघ
ऊब जाते हैं
अक्षांश-देशांतरों की
एकरसता से
जब उतरने लगता है
प्रेम की बाढ का पानी
तब स्मृतियों की दरारों में
उग आती है कवितायें
मौसमी खरपतवार की तरह
गीले किचकिचे धरातल पर
फैलती हैं कवितायें
उभरती हैं
बरसाती काई की तरह
और चिरकाल तक
बनी रहती हैं
प्रेम के भग्नावशेषों के समान।

जीवन, धूप और इन्द्रधनुष

विपदाओं से त्रस्त
जीवन के मानसूनो में,
जब पार उतरकर आती है
कोइ नन्ही उजली सी किरण
तो जैसे
हृदय की नीरवता में उग जाते हैं
भावों के, कृतज्ञताओं के
सात रंग
वैसे ही आकाश में भी
खिलता है इन्द्रधनुष
दुर्लभ किन्तु मनोहारी
हाँ, आकाश के भी
कई रंग होते है..........!
समय जैसे नित नए
रूप बदलता है,
अनुभव के सिक्को को
पहलू बदल बदल कर
हमारी हथेलियों पे रखता है
वैसे ही हर मौसम की
धूप और हवाओं का
अपना अलग ही
स्वाद होता है,
गंध होती है
.....हाँ, धूप भी
कसैली, तीखी या मीठी हो सकती है।

स्त्री होने के दो मायने

बड़ी ही विरोधाभासी होती हैं
ये स्त्रियां
तभी तो जूझती रहती हैं
जीवन पर्यन्त,
दोहरे मापदण्ड़ो से,
दोहरे अर्थों से
अपने मान, धर्म और परिवार के लिए
शिला सी दृढ़ता दिखाती हैं
और भीतर ही भीतर
होती हैं आहत...!
जब भी
ताश के पत्तों सी बिखर जाती हैं
ममता, करूणा, स्नेह से सराबोर ये
सब ही की पीड़ा पर
मलहम लगाती हैं
किन्तु स्वयं अंतस्थल के
किसी तल पर रिस रहे घावों को
ना कहती है, ना दिखा पाती हैं,..
ये स्त्रियां यदि अपनी हों तो
सौ पर्दो से ढांपी जाती हैं
बीसियों मर्यादाओं से बांधी जाती हैं
वरन् यही स्त्री इंच-इंच नापी जाती है
.....और अवसर मिलते ही
वस्तु मानकर उपयोग कर ली जाती है।

मोक्ष

.....और फिर वो बोली
अब मैं तुम्हें पाने की
लालसा नहीं करूंगी
भले तुम ईश्वर
हो जाओ,
क्यूंकि कोई भी
कामना, लालसा
लक्ष्य, साध्य
प्राप्य, ध्येय
बाधाएं हैं
मुक्ति मार्ग की

इनसे निवृत्ति ही
मोक्ष है
जिसे प्राप्त करने की
इच्छा न हो
जहाँ प्राप्त करने की
इच्छा न हो
जब प्राप्त करने की
इच्छा न हो
बस वहीं मुक्ति है
इच्छा ही न हो
वही मोक्ष है

प्रेम-पिंजर

.....तब अपनी
सागर सी अथाह
गहरी आखों में
उमड़ती लहरों को रोककर
वो कहने लगा कि
‘बांध लो मुझे
अपने प्रेम के पिंजरे का
पंछी बना लो
मेरा हृदय अब तुम्हारा हुआ‘

और फिर प्रेम ने
अपनी कोमल
भुजाओं को फैलाकर
उसे अपना बना लिया
प्रेम ने उसे
अपने हृदय रूपी पिंजरे में
रहने तो दिया
किन्तु उस पिंजरे का
दरवाजा
सदा के लिये तोड़ दिया!

मेरी कविताऐं

नहीं चाहती मैं
कि मेरी कविताऐं
यकायक ही हैरान कर दें तुमको
तुम कौतूहल भरी दृष्टि से देखो उनको
जैसे वर्षाकाल में
चमकती आकाशीय बिजली को
देखता है बालक कोई

मैं चाहती हूँ
कि मेरी कविताऐं
रिमझिम हल्की फुहारों सी बरसती रहें
जैसे कहीं दूर वर्षा होने पर
जो शीतल बयार बहती है
ठीक वैसे ही
धीमे-धीमे
तुम्हें छूकर मीठी सी गुदगुदी करें

जैसे दिसबंर की गुनगुनी नर्म धूम
वैसे ही तुम्हे,
तुम्हारे मन को सहलाती रहें
कि जिनके साथ
तुम जितना अधिक वक्त गुजारों
वो उतना ही आराम दें, विश्राम दें
तुम्हारे थके-उलझे मन को,..!

विरक्ति

कभी-कभी
जीवन में
सांसारिकता के इस रण में,
इक मोड़ ऐसा भी आता है
जो अनायास ही
हमारे समक्ष
अनेकों प्रश्न छोड़ जाता है

कभी-कभी
युद्ध में लीन हम
अपने अस्त्रों-शस्त्रों से
रिक्त होने लगते हैं
किन्तु सहसा ही
अस्त्रों-शस्त्रों से पूर्व
समाप्त हो जाती है
ना केवल विजयी होने की आकांक्षा
अपितु विलुप्त हो जाती है
युद्ध की इच्छा भी

प्रेरणाहीनता की
यह मनोदशा
प्रायः विरक्ति का उद्गम बनती है!

प्रेम-और कठिनाइयाँ

प्रेम सरल है
और उससे भी सरल है,
प्रेम में बह जाना
किन्तु उतना ही कठिन है
इसके तट पर ठहरना
अपना कण-कण समेटकर बांधे रखना,
सर्वस्व बींधने को आतुर
तीव्र प्रवाह के समक्ष

तर-नम हवाओं से
धकियाएं मेधो की उमड़-घुमड़ को
तीव्र पिपासा भरे नेत्रों से निहारना
किन्तु अत्यंत ही आवेशमय उस क्षण में
वहीं रूक जाना
उस परम लुभावनी
दृश्यावली को देखकर भी
वहीं स्थगन करना
प्रेम के उस भीषण आमंत्रण का,
हृदय में यहाँ-वहाँ
टकराती आशा-प्रत्याशाओं का,
अपना अंग-अंग
भिगो लेने को लालायित अपने स्व का

हाँ प्रेम सरल हैं बस कठिन है नियंत्रण!

अलिखित प्रेम

प्रेम जो
कविताओं में लिखा नही जाता
अक्सर गुम रहता है
दहलीजों के, ओर-छोर पर सलाइयों में
नुकीले सिरों से टकराकर गिरता है
और फिर उन्हीं नुकीले सिरों से
उठाकर पिरो दिया जाता है वक्त की बुनावटों में
खुले आगंन में उगती हर पौध पर बूंदो सा ठहरता है
और हवा की किसी मीठी थपकी से
टप करके आलिंगनबद्ध हो जाता है
मिट्टी के महीन कणों से
आंगन की हर पौध को जीवन देने के लिये

कभी मसाले से सने हाथों में महकता है
और फिर मुह-बंधे चीनी मर्तबानों के बीच पड़ा रहता है
और जब पक जाता है धूप से तो
अपनी महक से घर होने का अहसास कराता है
घर से दूर कहीं भी
वो प्रेम गुणा-भाग, जोड़-घटाव, सब जानता है
और शेष अंको को
अपने आंचल में समेटना भी जानता है

प्रेम जो जीवन नही पाता
कविताओं में या कहानियों में
किन्तु वो प्रेम स्वयं ही जीवन है
हाँ! वहीं प्रेम का व्यस्ततम स्वरूप है!

बदल जाते हैं

वक्त, हालात, मौसम, और नजारे बदल जाते है
बदलती हैं रूतें तो, गुलशन सारे बदल जाते हैं

बदलना कुछ लोगों का
नीयत की बदौलत होता है
जो ठीक हो नीयत के वो, मुसीबतों के मारे बदल जाते हैं

इन बेलों को मुकद्दर
दीवारों को ना सौंपना मेरे दोस्त
मैने देखा है, इक वक्त के बाद, सारे सहारे बदल जाते हैं

ठीक कहते है हाथों की
लकीरों में है सितारों का गणित
यूं ही तो नही मेहनत से, ये सितारे बदल जाते है

कोई कह दो उन किश्तियों से
ना उलझे भवंर से खामखा
लहर के जोर के आगे, अक्सर किनारे बदल जाते हैं

मैं हल देखती हूं
हुजूर के मसाइल का जब तलक
क्या गजब है कि तब तलक, मसले तुम्हारे बदल जाते हैं

रखा करते हो तुम शै सारी
जिस्म पे पैहरन की तरह
उतार देते हो जिस रोज, शौक तुम्हारे बदल जाते है।

दिसम्बर

फिर ठहर गया है
दिसम्बर
मन के दरख्तों पे
उन दरख्तों पे
जिनसे एक-एक कर
छिटक गए हैं मौसम सारे
जिनकी शाखों को
कसके पकड़ा है
भूली किसी की याद ने
जैसे धुंधलाई नजर के परिंदे
शाम होते ही दुबकने लगते है
अपने परों में
दिन भर की
थकन को समेटे
और उड़ जाते हैं
भोर की हल्की सी आहट सुनकर,
वैसे ही
चल देगा दिसम्बर भी
रात की किसी ट्रेन से
दरख्तों पे अटकी
बाज कहानियों
और किस्सो को समेटकर,
किसी सालाना मुसाफिर की तरह!

नारी मन

भयभीत कर देता है
बहुधा ही मुझे, मेरा स्त्री होना
लगातार घूरती नजरें
जब पर्यवेक्षित करती हैं
मुझमें नारीत्व के विभिन्न आयामों को

अपनी-अपनी मापनियों पे
जब तौला जाता है
मेरा आकार, कद, काठी
और तौली जाती है
मेरी लज्जा, शील, मर्यादाएं

कभी अनचाहे ठहाकों की गूंज
स्हसा ही आ टकराती है
मेरे स्वाभिमान के सर्वाधिक कोमल तल से,
और एक तरंग सी उठती है तभी
विषाद, घृणा, संकोच की

फिर भी मैं
हाँ, मैं एक स्त्री
नित्य पुनः उठती हूँ, संवारती हूं, सहेजती हूँ,
अपना भीतर-बाहर, अतंस-मानस
और रत होती हूँ एक नये युद्ध में,
फिर जुटती हूँ बचाने को,
स्त्री होने का अपना अभिमान,
छद्मवेशी अपमानों से।

वह प्रार्थना कहलाती है

दुर्दिनों की आग में,
विपदा के भीषण राग में,
सौभाग्य जो लौटाती है,
शीतल पवन सी आती है,
वह प्रार्थना कहलाती है

अहं के टकराव में,
कटुता के दुखते घाव में,
जो क्षमादान दिलवाती है,
एक मार्ग सुगम दिखलाती है,
हाँ विनय, वही कहलाती है

दुःख में हृदय जब व्यथित हो,
अवसाद में हो भ्रमित हो,
करबद्ध हो, मूंदो नयन
उस पे टिकाओं तुम ये मन,
जो परम् तक पहुचांती है,
वह प्रार्थना कहलाती है

अहंकार मन में यदि बढ चले,
यदि विष प्रतिशोधों का पले,
और उलझने भी ना टले,
इस राह तुम आना चले,
हर द्वन्द्व जो सुलझाती है,
हाँ, विनय वही कहलाती है!

चलो ढूंढते हैं

जो खो गया बातो का, वो सिरा ढूंढते हैं
जहाँ खोयी थी कहानी अपनी
चलो उसे जाकर वहाँ ढूंढते हैं

बहुत दूर तक न गया होगा
सुकून तुम्हारे मेरे दिल का
दिल की राहों पर उन
कदमो के निशां ढूंढते हैं

वो जिसमें दरकार न हो
कहने की, सुनने की
समझ जाए बिन कहे ही
इश्क में ऐसी कोई जुबां ढूंढते है

ये रोग लाइलाज है
जो पाला है तुमने भी, मैने भी
थोड़ा चैन दिलों के बावस्ता
और थोड़ी शिफा ढूंढते है

आसां नही मुकम्मल मुहब्बत
दुनिया के उसूल ओ रसूल में
चलो इस दुनिया से इतर
हम अपना कोई जहाँ ढूंढते हैं

टूटती हिम्मतों को जोड़कर
बढ़ चलें जहाँ दो हमसफर
हम अपनी मंजिल तक कोई नया रास्ता ढूंढते हैं

सूनापन

यूं ही चलते-चलते
कभी-कभी
सहसा मैं
स्वयं को घिरा पाती हूँ
एक अजब कोलाहल में
ध्वनियों की
चित्रों की
अनुभूतियों की
विचित्र रेलमपेल लगी होती है
मेरे आस-पास
मेरे भीतर
तब यकायक
भारी लगने लगती है
सांस, धड़कन
और मैं पूरे जोर से
छुड़ाती हूँ अपने हाथ
भीड़ की कसी मुठ्ठियों से,
एक लम्बा श्वास
प्राणदायी उच्छ्वास एकांत का
जीवित रखता है
मेरे भीतर जीवन को
और फिर
ऊँची पहाड़ियों की
गूंजती घाटियों के जैसे
मुझमें भी गूंजता है
भावों का सूनापन,...असीम सूनापन!

ब्लैकहोल

धीमे धीमे बीत रहे हैं
समय के अंतराल और क्षण भी
बुझते जा रहे हैं एक के बाद एक
जैसे सितारे गिरते हो
और गिरकर खत्म होते हो
किसी ब्लैक होल में
जीवन के वृक्ष से हाथ छुड़ाकर
स्मृतियां चल पड़ी है कहीं दूर
हवाओं के आश्रय से
और परिंदे भी अब जाने लगे हैं प्रवासी होकर
पतझड़ के बहाने से
हाँ, पर मन वहीं खड़ा
देखता है, सुनता है, पत्तों की ये उठापटक
परिंदों की फड़फडा़हट
और खडा़ रहता है मौन
किसी निर्जन वन की तरह
रात्रि के सघन मौन में
जुगनू निकल पड़े हैं
असंख्य अश्वों पर सवार
टिमटिमाते रोशनियों के
पैरों तक ढके लिबासों में
यह टिमटिमाहट व्यर्थ तो नहीं है
आखिर प्रेम और भूख
दोनों ही तो जला देती है
भीतर से बाहर और.......बाहर से भीतर तक!

आज फिर

आज फिर मन घबरा रहा है माँ
आज फिर बीता हर लम्हा याद आ रहा है माँ
जिन यादों को मैंने पिछले स्टोर रूम की
अलमारी में बंद कर रखा था
वक्त उन सारी यादों को फिर से दोहरा रहा है
माँ तुम्हारे हाथ की चाय
और तुम्हारी आवाज से जागने का वह सुख
तुम्हारा रोकना टोकना, बात बेबात डांटना
अब इस जन्म में न मिल सकेगा
यह गम मुझे खाए जा रहा है माँ
आज फिर मन घबरा रहा है माँ
तुम्हारी परछाइयों के साथ ही
अब तो चलना होगा
अब शायद खुद ही रोना
खुद ही संभलना होगा
कैसे चल सकूंगी मैं तुम्हारे बिना
यह सोचना भी मुझे डरा रहा है माँ
आज फिर मन घबरा रहा है माँ
तुम बिन देखो वार त्यौहार भी आ रहे हैं
दिन हफ्ते महीने फिर मौसम बीतते जा रहे हैं
लेकिन मन आज भी वही है
जहाँ तुम्हारी गोद में अंतिम बार अपना सर रखा था
क्या करूं मैं
मेरे भीतर का यह बच्चा
तुम्हारी गोद छोड़ ही नहीं पा रहा है माँ
आज फिर मन घबरा रहा है माँ!

तुम्हारे लिए

चंद तस्वीरें कच्चे लम्हों की
पक्के रंगो सी मेरे भीतर झांकती
वो तुम्हारी शरारतें
उन शरारतों को / तस्वीरों को
मन के दराजों में सजा रखा है,... तुम्हारे लिए

कुछ पुरानी बिसरी बातें
वो बातें जिनमें
बेहद.... बेहद प्यार है
उन बातों के कुछ छंद
अपने गीतों में छुपा रखे हैं,... तुम्हारे लिए

वो चांद
जिसकी रिमझिम चांदनी में भीगे थे तरबतर
जिस के साए में डुबोकर
एक ही प्याली में अपनी अपनी मुस्कान
पिया था घूंट घूंट
थोड़ा तुमने / थोड़ा मैंने
उस चमकते चांद को
वही छत की उस बारी में
आधी कच्ची ईंट से दबा रखा है,... तुम्हारे लिए

वो बातें
जिन की गर्माहट से
पिघल गया था
चादर का वो एक कोना

और तुम्हारे सेंट की खुशबू से
नीली पड़ी रोशनी में
जब देखा था आईना
स्याह रातों की उन रोशनियों को
दीपों में उगा रखा है,... तुम्हारे लिए

कहीं छूकर बह ना जाऊं
मैं नदी बनके
और बिखर न जाए
कहीं इंतजार के सारे पल
बह जाए आंखों के
मॉनसूनो में
इन आंखों के किनारों पर
मुद्दतों से एक बांध बना रखा है,.. तुम्हारे लिए

याद है मुझे इंतजार की
वो पहली बारिश
सदियों तक / तुम्हारे मेरा होने की
मन्नत के धागे की वो पहली गांठ
और किसी दिन
जब तुम आकर वो धागा खोलोगे
और उन्हीं धागों की गिरफ्त में
जकड़ लोगे मुझे
उस दिन के लिए
हां उस दिन के लिए
मैंने खुद में खुद को बचा रखा है,.. तुम्हारे लिए
.....बस तुम्हारे लिए!

भेड़ियों से सावधान

घरों के बाहर
अक्सर लिखा देखती हूं
'कुत्तों से सावधान'
बरबस ही ख्याल आता है
काश चंद इंसानी चेहरों पर भी
एक तख्ती लगी होती
'भेड़ियों से सावधान'
हालांकि अंतर तो होता है
बड़े-बड़े लोहे के दरवाजों
और अलग-अलग चेहरों के पीछे बैठे
कुत्ते और भेड़िए में
घरों में घूमते हैं यह कुत्ते
बाअक्सर भोंकते हैं
उछलते हैं
खेलते हैं
अपने होने का एहसास दिलाते हैं
घर के अंदर भी,.. बाहर भी,..

मगर भेड़िए
ये बस छुप कर बैठते हैं
घात लगाते हैं
तब तक सामने नहीं आते
जब तक शिकार पूरी तरह
इनकी जद में ना आ जाए

शोर नहीं करते
बस अपनी गगुर्राहटों से
ललचायी जीभ से
टपकती लार
और वासना से सने
नाखूनों से / दातों से
तार-तार कर देते हैं
तुम्हारा वजूद / विश्वास
और छोड़ जाते हैं
एक बदबूदार सडा़ंध मारता धब्बा
तुम्हारे भरोसे पर हमेशा के लिए

तो अब कभी मिले
कोई चेहरा तो देखना गौर से
कहीं उस पर
किसी भाषा में टंगी ना हो कोई तख्ती
और लिखा हो
'भेड़िए से सावधान'
परखना उसे,
दूर ही रहना

क्योंकि कुत्ते
......भेड़ियों से ज्यादा वफादार होते हैं!

खुद को भी थोड़ा बदलना होगा

पकड़ उंगली चांद की
रात के उस मुहाने तक
जहां सूरज उगा है हमारी प्रतीक्षा में
हमे इस अंधेरी गुफा के
उस ओर निकलना होगा, खुद को भी थोड़ा बदलना होगा!

सच की राह सरल नहीं
तीखे मोड़ हैं यहां विश्वासघात की,
कपट की, निंदा की, उपहास की
कटीली झाड़ियां बिखरी हैं
बिखरे हैं कुछ नुकीले पत्थर वेदना के
किंतु धार कर चरित्र का लौह कवच
हमें सत्य की राह पे ही चलना होगा, खुद को भी थोड़ा बदलना होगा!

हालत कठिन हो सकते हैं
और संभव है रास्ते पे विपदाओं का जाल बिछा हो
जीवन के सागर में सुरसा सी
चुनौतियों के सामने भी होकर कभी छोटा,
कभी होकर बड़ा निकलना, खुद को भी थोड़ा बदलना होगा!

भाग्य सदा दुलारे यह संभव नहीं
कोई हाथ उठाने को मिले हर ठोकर में
यह भी जरुरी नहीं
फिर भी नियति के सौतेलेपन में
आप ही गिरकर संभलना होगा, खुद को भी थोड़ा बदलना होगा!

हाँ! सच है

हां सच है ये कि
रोज बस स्टॉप पर
मेरी नजरें बस
तुमको ही ढूंढा करती है
जिस दिन ना आओ तुम
तो तुम्हारी बातें
बगल वाली सीट से
यूंही मेरे कानों में गूंजा करती है
लेकिन सुनो!
मैं तुमसे प्यार नहीं करती

तुम्हारे मैसेज की
नोटिफिकेशन के आने पर
दोनों ही चमकती है
मेरे मोबाइल की स्क्रीन
....और मेरी आंखें
तुम्हारी बातों की गरमाहट में
बिना शॉल भी छत पर
सर्द रातें
टहल टहल कर
गरम हो जाया करती हैं
लेकिन सुनो!
मैं तुमसे प्यार नहीं करती

तुम्हारी फेवरेट सब्जी को
बार-बार बनाकर

हर बार मैं तुम बनकर
उसे चखती हूं
तुम्हारे भेजे गीतों को
हर शाम गुनगुनाया करती हूं
लेकिन सुनो!
मैं तुमसे प्यार नहीं करती

कई दफा कोशिश की है
खुद को देखने की
तुम्हारे वजूद से इतर
लेकिन तुम्हारी निगाहें
हर ओर से घेरे है मुझे
किसी द्वीप के चारों ओर
फैले समंदर की तरह

तुम पूछते हो हर बार
क्या है ये प्यार ?
और मेरा खाली सा इनकार
पजल बन जाता है तुम्हारे लिए
हां, हर बार मैं
तुमसे यही कहती रहूंगी
कभी नहीं बताऊंगी तुम्हें
वह सच
वह मीठा गुदगुदाता सच
कभी नहीं कहूंगी
वो सच कि जिसको छुपाना
.....अब मेरे भी बस में नहीं!

मैं, रात और नींद

रात फिर बेबस सी
आ खड़ी हो गई मेरे दरवाजे पर
नींद के चंद सिक्कों की
उधारियों की तलाश में
हालांकि मैंने कितनी बार मनाही की है
समझाया है कि मेरा भी हाथ जरा तंग है
आजकल महंगाई के इस दौर में
सब कुछ तो महंगा है
महंगे सपने, महंगे एहसास
महंगी जरूरतें और महंगा है इश्क
इतना चैन और नींद तो
कमा नहीं पाते हैं
जितना खर्च हो जाता है महंगी ख्वाहिशों पर

फिर भी कोशिश की मैंने ढूंढने की
कि कहीं पड़ा हो कोई भूला सिक्का
नींद का तो दे दूं इसे
दो पल ही चाहे / नींद के
तो ढल जाएगी
यह रात खुशबाश, दुआएं देते हुए
मगर कंगाली के आलम में
कोई नींद ना मिली
मैंने तलाशा पलकों पे
पर्स की जेबों में अलगनियों के
रंगीन कागजों के नीचे
पुरानी संदूक में भी

मगर सब खाली मिले
मेरी तरह जागते मिले

मैंने रात को बिठाया
दो बिस्कुट, एक प्याला कॉफी के साथ
कुछ जज्बात भी परोसे
वहां तुम्हारी फ्रेम में सजी
तस्वीर को देख बहुत बातें की
कुछ किस्से मेरे मोबाइल से भी सुनाए
भीतर की उमस से जब
बेजार होने लगी रात
तो बाहर लॉन में
हम टहलने लगे
साथ-साथ ढेरों किस्से थे वहां
चांद सितारों से लेकर,
जंग में सिपाही तक
घरों की दहलीजों पर
बतियाती औरतों से लेकर,
अखबार बेचते हुए उस गरीब लड़के तक

सुनते-सुनते रात भी जम्हाई लेने लगी
और थके कदमों से चल पड़ी अपने रास्ते
मेरे किस्सों का बोझ
अपनी आंखों में लिए
मैंने फिर अपनी जेबों को टटोला
......हालांकि नींद अब भी वहां नहीं थी !!

तन का काहे अभिमान धरे

तन का काहे अभिमान धरे
यह तन माटी का पुतला रे

यह देह सर्वथा नश्वर है
इसकी छवि ही क्षणभंगुर है
समझो हिम की डली सा इसको
बस ताप लगे तो पिघला रे
तन का काहे अभिमान धरे
यह तन माटी का पुतला रे

काया है पिंजरा प्राणों का
सांसो की सीमित तानों का
समय बीते जो श्वास रीते जो
पंछी प्राणों का उड़ चला रे
तन का काहे अभिमान धरे
यह तन माटी का पुतला रे

तन पंचतत्व का संयोजन है
कहते इसको सब जीवन है
मत इसे गवाओं, ना व्यर्थ बिताओ
कर जाओ जग का भला रे
तन का काहे अभिमान धरे
यह तन माटी का पुतला रे!

माँ, तुम कौन हो?

धरा की धारा के संग बहती
समय पटल की पीछे रहती
तुम कौन हो?
नित्य उदित होती भानु संग
देती प्रकृति को अनुपम रंग
इन रंगों को जीवन देती
तुम कौन हो?
पल्लवन-स्पंदन में तुम हो
चेतन अवचेतन में तुम हो
जग माया का भार हो सहती
तुम कौन हो?
हर दिन उगता ढलता रहता
जीवन तुमसे चलता रहता
तुम सृष्टि में प्राणों सी बस्ती
तुम कौन हो?
सब छूट रहा यह बंधन है
तुम से ही अनश्वर आकर्षण है
तुम ही में लीन मैं तुमसे कहती
तुम कौन हो?
हे उर्जामयी माँ! तुम कौन हो?

क्या बात करते हो

काट के परों को परिंदों की
औकात की बात करते हो
बड़े मासूम हो तुम भी
दिल और जज्बात की बात करते हो
उसने राब्ता तक न रखा
मुझसे बरसो बरस तक
तुम आज उस शक्स से
मुलाकात की बात करते हो
तंहा छोड़ गया था जो हर रिश्ता
हर बात सिरे से खारिज करके
अब क्या है लेना देना मुझको
और किस बात की बात करते हो
गुजारी है बेशुमार रातें मैने
गीले तकियों की उदासी भरी सीलन में
कहो उन तन्हा रातों में से
तुम किस रात की बात करते हो
मेरी हर फरियाद से वो गाफील रहा
मेरा महरम हो के
खैर अब तो गैरों में गिनती है उसकी
तो कैसी दलील और
किन सवालात की बात करते हो!

क्या हर्ज है

अपने बुलाएं तो जाने में क्या हर्ज है
रूठा हो कोई दोस्त तो मनाने में क्या हर्ज है

जो बातें घाव ना रहे नासूर बन जाए
उन कड़वी यादों को भुलाने में क्या हर्ज है

एक हाथ से बजती नहीं रिश्तो की तालियां कभी
तो ऐसे में रिश्ता दो तरफ से निभाने में क्या हर्ज है

जो दीवार बांट दे पहले घर, गली, फिर मुल्क
ऐसी दीवार बाकोशिश गिराने में क्या हर्ज है

जो कलम लिख रही हो नगमा ए रोशनी वहाँ
एक चमकता चांद उस खिड़की पे टांग आने में क्या हर्ज है

बात बनाने की ही हो, चाहे बातें, माहौल या तमाशा
फिर घर एक गरीब का बनाने में क्या हर्ज है!

ये मैंने सुना है

हम नहीं मगर हम सा कोई जहाँ में कभी रहा होगा
जो मैने कहा है मुझसे पहले भी किसी ने कहा होगा

अभी कच्चे अधपके से हैं वो अंधेरे सारे
मालूम होता है कोई सितारा अब तक वहाँ चमकता होगा

पसरा है सुकून इस कदर बस्ती में परिंदों की
गोया जानते हो कि शज़र फिर से हरा होगा

वो खा रहे हैं नोच कर दम तोड़ती शराफत को भी
चलो इस लाश से किसी का तो भला होगा

थोड़ी पैनी रखो गर तरकीब भी नज़र भी
देखो फिर इस गिरह से बाहर कोई तो रास्ता होगा

गहरी कितनी भी हो बीत जाती है हर शब आखिर
ये मैंने सुना है.... तुमने भी सुना होगा!

मुश्किल क्या है

तुम मुझे जान ही लो अगर, तो मुश्किल क्या है
रखो न मुझसे इत्तेफाक फिर मगर, तो मुश्किल क्या है

बस यहीं तक हो अपना सफर, तो मुश्किल क्या है
तुम और मैं लें अपनी डगर, तो मुश्किल क्या है

न आओ मुद्दतों नज़र, तो मुश्किल क्या है
करो ख्वाबों में गर बसर, तो मुश्किल क्या है

मत बुलाओ मुझे उम्र भर, तो मुश्किल क्या है
पर चले आओ महज मेरे बुलाने पर, तो मुश्किल क्या है!

लगन

मुश्किलें डरपोक हैं पल में दफा हो जायेंगी
हैं वहम सब परेशानियां एकदम धुआं हो जायेंगी

दुःख के बादल हौसलों की धूप से छंट जायेंगे
यदि मन में थोड़ी लगन हो तो पहाड़ भी कट जायेंगे

गम की अंधेरी रात में भी धैर्य सुबह लायेगा
सच्ची लगन का सूर्य चहुंओर जगमगायेगा

जीवन के संघर्षों में प्रतिपल साहस की डोरी थाम कर
बढ चल निरन्तर लक्ष्य को, हर कर्म हो निष्काम कर!

इक खत तुम्हारे लिए

सोचती हूँ मैं कभी कभी
इक ख़त लिखूं तुम्हें,
लिख दूं, कि दिल ये फिर
ज़िद पे अड़ा है,
हो के फरियादी,
तुम्हारे दर पे खड़ा है,
लिख दूं, कि फिर एक बार चाहिए,
थोड़ा या ज्यादा, तुम्हारा प्यार चाहिए,
या लिखूं कि अनंत अंबर में
चांद तन्हा बहुत है,
तुम जो भर लो, बांहों में तो
जीने को वो एक लम्हा बहुत है,
या लिखूं मैं दिल की दुश्वारियां सारी,
खत कर दूं, बेचैनियां, बेताबियां,
बेकरारियां सारी,
इस आग के दरिया में,
मुझे डूब जाना है,
मुझे अब 'मैं' नहीं रहना,
मुझे बस तुम हो जाना है,
तुम में ही गुम हो जाना है,
मुझे बस तुम हो जाना है।

कौन?

जिन रातों में शामिल है, तेरे होने की महक
महकती रातों में वहाँ नींद बुलाये कौन

ख्वाब मय है उदास आंखों को
ख्वामखा इन आंखों को सुलाये कौन?

लबों पे ठहरी गुलों की ओस है तिश्नगी
हो के बेदर्द इसे लबों से गिराये कौन?

आ तो गये बरायकिस्मत तेरी गलियों में काफ़िर
अब इस महफिल से खुदा के नाम पे भी उठ के जाये कौन?

रास आ गई जब परिंदों को शहरगर्दी की हवा
लौट कर शहर से गांव के घर आये कौन?

पढ़ रहे हो

ये जो तुम डूबकर यूं किताब पढ़ रहे हो
ऐसा लगता है मानो कोई ख्वाब पढ़ रहे हो

मैं ताकती हूँ तुमको, तुमको ख़बर भी है क्या
ये कौनसी कहानी लाजवाब पढ़ रहे हो?

मेरी धड़कनो पे काबिज हैं आहटें तुम्हारी
इस बेबसी का भी क्या कोई हिसाब पढ़ रहे हो?

समझा सके जो तुमको, हाल ए दिल हमारा
क्या इन दिनों कुछ ऐसा जनाब पढ़ रहे हो?

क्या मीर है या गालिब, जो आंखों में सुर्ख डोरे
लेकर के जैसे कोई शराब पढ़ रहे हो

तुम सामने हो बैठे, ये भी तो इक अदा है
ना फर्क कि क्या अच्छा या खराब पढ़ रहे हो!

कहाँ रह गया आखिर?

कहाँ रह गया
वो यौवन का वो पहला वसंत,
जिसकी एक छुअन से
गुलाबों सी रंगत लिए
खिल उठे थे
रात और दिन
सुन्दर सुगन्धित
फूलों की तरह
और उन गुलाबी शामों में
मन में
अंगडा़ई लिया करती थी
सहस्त्रों कामनायें
अनकही अनसुनी सी
कहाँ रह गया
वो कॉलेज का साइकिल स्टैंड,
जहाँ प्रेम की
पहली पाती को
मैने पढ़ा मगर
समझा नहीं,
यहाँ वहाँ देखती
उन झिझकती आंखों में
मैंने कुछ तो पाया
जिसे सहेजा नहीं,
......वो प्रथम प्रेम की अकुलाहट ही तो थी।

नवंबर

कोहरे की झीनी चादर में लिपटा नवंबर,
बदलते मौसम की
हल्की सर्द परछाइयों से खेलता,
बीती दिवाली की
यादों की फिसलन को,
उंगलियों के पोरों में लेकर मलता,
जैसे छूटती ना हो,
स्निग्ध छाप
किसी दिए के निशान की,
उमंगों की धीमी धीमी पदचाप,
और मन की बंद होती
खिड़कियों की चिटखनियों के
सरकने की आवाजों जैसा,
अब मन को भी ढकने लगेगी,
जाड़े की ओस भरी उनींदी आहटें,
आते नए साल की,
पहली पहली पातियों की
किनारियां सजाता,
पिघली-पिघली नर्म झीलों को,
नए-नए सांचों में जमाता,
और धुआं धुआं वादियों को,
अपने गुदगुदाते आलिंगन में लेता,
भावनाओं के क्षितिज पर
नवीन अंबर सा पसरता,
सुनसान सर्द सुबह के
पथिक सा नवंबर,....देखो! चला आ रहा है।

एक समय के बाद

एक समय के बाद हर कहानी खतम हो जाती है,
धूप छुप कर किसी पर्वत तले सो जाती है,

मैं काटती हूँ, नुकीली शाखें वक्त की शाम तलक,
रात कंटीली झाड़ियां फिर आंख में बो जाती हैं,

मैने कब का किनारा कर लिया था याद से तेरी,
चली आती है वो, तन्हाई में,दुखड़ा वही रो जाती है

जा के कह दो ख्वाहिशों से, थोड़ा दूर से निकला करें
बड़ा परेशान करती हैं, ये मेरे पास जो आती हैं

किसी ने देखी हो हंसी मेरी तो ख़बर करना,
मैं हर बार रखती हूँ सम्हाल के, ये हर बार कहीं खो जाती है!

कम से कम

कम से कम इतना तो हमें करना होगा
बनके इंसान सही मायनों में उभरना होगा

हर रास्ते में बहारें ही मिले, ये जरूरी तो नहीं
हमें हंसकर कटीले रास्तों से भी गुजरना होगा

दर्द तेरा हो या मेरा, दर्द दुखता है बहुत
बस ऐसा सोचकर कर, जख्म हर एक का भरना होगा

यह क्या हो गया है हवाओं को, जहर की जद से
दम ना घुटे इसलिए बनके महक बिखरना होगा

आईने भी बदलते हैं, मयार खूबसूरती के
वक्त का तकाजा है कि नई सोच से सवरना होगा!

पानी बिना

एक सुबह
एक ठीक-ठाक सी उजली सुबह
अचानक जाग उठता है वो
बंजर आंखें, मंजर ख्वाबों
और बंजर जमीन की भयानक दुनिया में
वो दुनिया जहाँ पानी की एक बूंद भी न थी
सूख चुके थे जहाँ
जज्बात, इंसानियत और आंसू भी
गरम तपते रेगिस्तान में,
प्यास के सूखे समंदर में
भागता रहा वो यहाँ वहाँ
किचन से बैडरूम, सिंक से बाथरूम, सब जगह,...
गलियां बाजार तप रहे थे
गरम गाढे खून की बदबू यहाँ-वहाँ पसरी थी
मगर पानी नहीं था.... हाँ, पानी कहीं नहीं था
उसने बहुत ढूंढा, बहुत तलाशा
बस एक बूंद उस अमृत की
वह जो सबसे साधारण है
पर वह,जो सबसे असाधारण है
बस एक बूंद पानी की
हे भगवान! उससे तो अब
हिला भी नहीं नहीं जाता था
वह सूख कर झड़ने लगा
पतझड़ के मारे किसी सूखे पत्ते की तरह
वो रो रहा था, मगर आंखें सूख चुकी थी
क्या उसने बर्बाद कर दिया, अपने भीतर की नमी को भी?

तुम स्वाधीन हो

तुम कहो
जो तुम्हें कहना है
उड़ो
जिस आसमान तक
तुम्हें उड़ना है
व्यक्त करो
जो मन की अनकही परते हैं
क्या हो गया
अगर कोई सुनने वाला नहीं,
क्या हुआ
यदि कोई देखता नहीं, तुम्हारी उड़ानों को
समझता नहीं
तुम्हारे मन के अनकहे विचारों को

कहना फिर भी
कहना ही है
उड़ना फिर भी
उड़ना ही है
कब रोका है किसी नदी ने
अपना प्रवाह
तट की शून्यता देखकर,
जो फूल खिला है
किसी निर्जन वन में,
सुंदर वह भी है
वायु ने अपनाया है
उसकी भी सुगंध को

रात्रि के चंद्र को
किंचित भी चिंता नहीं
कि ये धवल विस्तारित चांदनी
बदी है किसके भाग्य में और किसके नहीं

तो तुम गाओ
जो गीत है तुम्हारे
तुम्हारे गीत, तुम्हारे शब्द, तुम्हारी अभिव्यक्तियां,
इस अनंत ब्रह्मांड में सदा गूंजती रहेगी
कोई सुने, न सुने
कोई देखे, ना देखे
इसलिए मैं कहती हूं तुमसे
तुम कहो, उड़ो, नाचो
अपनी आत्मा की लय पे
हंसो, मुस्कुराओ, खुद को जताओ

सुनना, समझना, प्रशंसा
ये सब प्रमाण मात्र है
तुम प्रमाणों से मुक्त होकर रहो
इन प्रमाणों से परे एक आनंद है
जो तुम्हारा है
वह क्षण अनश्वर है.... तो मेरी मानो
तुम जिओ,.. खुल कर जिओ
क्योंकि यह जीवन तुम्हारा है
और तुम.....एक स्वाधीन आत्मा हो!

कोई बात नहीं

हालात जब परेशान करें
पड़ोसी के बच्चे थोड़ा नुकसान करें
बस मुस्कुरा कर कह देना, 'कोई बात नहीं'

सब्जी में नमक थोड़ा ज्यादा हो
या बैटर हाफ भूल गया कोई वादा हो
रिएक्शन में बस ये जतला देना, 'कोई बात नहीं'

पतिदेव एनिवर्सरी पर लेट हो जाए
कैंसिल अगर कोई रोमांटिक डेट हो जाए
बस उनको बाहों में लेना, बतला देना, 'कोई बात नहीं'

बच्चे घर एग्जाम में फेल हो जाए तो
काम वाली भी काम पर ना आए तो
झुंझलाना मत कह देना, 'कोई बात नहीं'

अगर स्माइल पर हावी हो जाए बैड लक
और लगने लगे "रियली यार, लाइफ सक्स"
इक स्टेटस अपडेट करना और लिख देना, 'कोई बात नहीं'

कोई तुमको इग्नोर करे
या अपनी बक बक से बोर करें
भरना लम्बी सांस, कहना खुद से, 'कोई बात नहीं'

बड़ी राहत मिलती है ना
जब होपलैस सिचुएशन में भी
कोई हाथ थाम कर कह देता है, 'कोई बात नहीं'

कभी किसी की उदास आंखें देखकर
मजबूरी से बंधे हाथ देखकर
अपना भी मन करता है
कि जाकर उसको सीने से लगायें
और कह दें, 'कोई बात नहीं'

सारी दुनिया को बदलने के
सपने देखने वाली आंखें
जब अपनी ही बदली सूरत देखती हैं
तो झुर्रियों से झांककर
आइना भी मुस्कराते हुए कहता है, 'कोई बात नहीं'

जाने कितनी उम्मीदें,
कितने सपने, कितनी सांसें, कितने रिश्ते
बस इन तीन लफ्जों के इंतज़ार में
जीते भी हैं, मरते भी कि बस कोई
थाम कर उनको एक बार
आंखों में आंखें डालकर कह दे, 'कोई बात नहीं'

मगर ऐ ज़िन्दगी!
तू अफसोस न करना
मैं भी शिकायत नहीं करूंगी
अच्छा था या बुरा था,
जो बीता तेरे साथ बेहतरीन था

और जैसा भी था, 'कोई बात नहीं'

दिल टूटा फूटा है रखोगे क्या?

दिल टूटा फूटा सा है रखोगे क्या?
मन कसैला है मेरा चखोगे क्या?
जरा एलर्जी है मुझे नकाबों से
तुम जो हो जैसे हो दिखोगे क्या?
सुख-दुख पीड़ा हर्ष ये सारे
दो पहलू हैं जीवन के
मेरे दुख और पीड़ा में भी
संग मेरे रहोगे क्या?
एक बड़ी सी बस्ती है सपनों की
मेरी इन दो आंखों में
सपनों की इस बस्ती में
तुम भी आकर के रहोगे क्या?
सिर्फ कहना ही नहीं, सुनना भी है
मुझे तुमसे बहुत कुछ
अपने मन का भय और पागलपन
खुलकर मुझसे कहोगे क्या?
प्रेम की पथ पर हो सकता है
बाधाएं ही बाधाएं हो
हाथ थामकर मेरा तुम
उस कठिन डगर पर चलोगे क्या?
मेरी कहानी में पुलकन का
तुम ही पहला पन्ना हो
हर पन्ने पर ऐसे ही आकर
पहली पंक्ति में मिलोगे क्या?
तुम जो हो जैसे हो दिखोगे क्या?
दिल टूटा फूटा सा है रखोगे क्या?

मैं जब लिखूं

जब मन घबराए तो लिख दूं
कुछ समझ न आए तो लिख दूं

पीड़ा लिख दूं, संताप लिखूं
मैं राग लिखूं, आलाप लिखूं
जो कह ना सकूं, मैं वो लिख दूं
छिप के सबसे, तुमको लिख दूं
लिखना यदि एक कहानी है
तो फिर मैं इसका सार लिखूं

छोड़ किनारे संशय सारे
जाकर मन के उस पार लिखूं
मैं मौन लिखूं, आवाज लिखूं
मैं सपनों की परवाज लिखूं
इक मन की मैं थाह लिखूं
दूजे मन की हर चाह लिखूं

गाये ना गाये कोई दुख तो नहीं
मैं सत्य को जाती हर राह लिखूं
राहत थोड़ी सी मिल जाए
इतना सा मैं अवकाश लिखूं
जो उड़ने को तत्पर बैठा है
उस पंछी को आकाश लिखूं।

ये हाहाकार क्यों है?

हे शक्ति की अधिष्ठात्री मां!
तेरे जग में यह हाहाकार क्यों है?
एक दिन पूजे जिनको देवी कहकर
उनके भाग्य में यह चित्कार क्यों हैं?

हे महिषासुरमर्दिनी! हे रक्तबीज नाशिनी!
बदला तेरा व्यवहार क्यों है?
घट घट बसते दाना असुरों का
शेष अभी-अभी संहार क्यों है?

जो मां बच्चों को जीवन देती पालन-पोषण करती
उसके हिस्से दुत्कार क्यों हैं?
स्त्री जो राधा है, सीता है उसकी श्रद्धा,समर्पण
और प्रेम का हिंसा ही प्रतिकार क्यों है?

यदि इतनी मलिन है सोच सभी की
फिर नौ दिवस का यह आडंबर
और यह जय जयकार क्यों है?
यह संकल्पहीन त्योहार क्यों है?

कन्या यदि सचमुच में लक्ष्मी है तो भ्रूण हनन का
अब भी जारी व्यापार क्यों हैं?
पग पग पर दुर्योधन जीवित है
हर ओर गूंजती द्रौपदियों की यह पुकार क्यों है?

आत्म

जगत का मुंह क्यूं
अस्थिर है यह मर्त्य है
आत्म ही प्रयोज्य है
आत्म एकल सत्य है
मोह भ्रम है पाश है
अंत क्षण की त्रास है
आत्म मुक्ति की राह है
परम उन्मुख प्रवाह है
जग का प्रयोजन जग नहीं
यह मूल से विलग नहीं
आत्म मध्य में एक सेतू है
मनु जन्म जिसके हेतु है
फिर क्यों भटकता मन यूं ही
जैसे हो भूला कुछ कहीं
माध्यम है यह ना लक्ष्य है
आत्म एकल सत्य है
भव बार सकल निस्तार अब
ले अनंत को विस्तार अब
आवृत है जो, पर दृश्य है
आत्म एकल सत्य है

क्या है?

मैं हरफ कर दूं उदासियों को तेरी रास्ता क्या है
गमजदा चेहरों के इस शहर से मेरा वास्ता क्या है

घूमते हैं अक्सर ख्वाब मेरे
गलियों में यूं ही
नहीं जानते हिज्र में जागती निगाहों का
पता क्या है
समंदर से खामोश होते हैं कई चेहरे
दिल और जबान
इतने गहरे कि दिखता नहीं उनमें छुपा क्या है

उस मासूम को घेरकर दरिंदों ने
नोच डाला था जहाँ
पूछते हैं राहगीर वहाँ रुककर ये चीखें, ये रोना,
ये सिसकियां क्या है
किसी रोती तड़पती रूह की आंख से
अश्कों का गिरना
ऐसे खौफ और दर्द में आता किसी को मजा क्या है

रोज लुटती है किसी न किसी शहर में
हयात ए वतन
बात घर की न हो जब तक हो लगता है कि
बस हुआ क्या है
उसके कदमों में झुकाते हैं सर, झपटते हैं
फिर उसी पर
इस मुल्क में आखिर जमीर ओ ईमान को हुआ क्या है?

तुम मिल जाओ ना

तुम मिल जाओ ना
प्रेम में पथिक
मेरे व्याकुल मन को
किसी सुहाने गंतव्य की तरह
विरहा के अंधेरों में तड़पते
इस राही को
उजाले की नर्म पाती की तरह
जिसके रेशमी शब्दों के पीछे
मैं चुपचाप चल पड़ूं
चलती रहूं
फेरे दर फेरे
भंवर दर भंवर
तुम्हारी आतुरताओं की
झिलमिलाती किनारियों से सजी
गुलाबी चुनर के साथ
बांधकर अपने हृदय की
अनंत गहराइयों का खुला छोर
तुम्हारे स्नेह का सौभाग्य
भरकर अपनी मांग में
गुनगुनाया करूं
अपनी कलाइयों पर
खनकते स्पर्श गीत तुम्हारे
प्रेम की वीणा पर झंकृत
किसी जाने पहचाने राग की तरह
.......तुम मिल जाओ ना!

यह कौन गीत गा रहा है?

अंधकार की सूने पथ पर
आशाओं के दीप जला रहा है
यह कौन गीत गा रहा है?
आओ कि सफलताएं,
तुम्हारी बाट जोहती हैं
मन में तुम्हारे छुपे
स्वप्नों को यह टोहती हैं
बाहें फैलाए अनंत नभ की
हमें पास बुला रहा है
यह कौन गीत गा रहा है?
पराजय कसौटी मात्र है,
यह बात तुम ना भूलना
सत्य असत्य धर्म और अधर्म के
भंवर में ना तुम झूलना
शतकों सूर्य सा दीप्तमान
मधुर मधुर मुस्कुरा रहा है
यह कौन गीत गा रहा है?
माना कि कठिन घड़ी है यह
माना संकट का घेरा है
ना मार्ग सूझता सहज यहाँ
माना घनघोर अंधेरा है
तम के इस गहनतम प्रहर में
एक पुंज वहाँ जगमगा रहा है
यह कौन गीत गा रहा है?

प्रेम-कविता

प्रेम क्या है
प्रेम गाया जाए
तो गीत है
प्रेम पढ़ा जाए
तो कविता है
गर प्रेम गीत नहीं
तो क्यों मेरी धड़कन की
हर लय में तुम ही सुनाई देते हो
तुम्हारी आहटें ही गूंजती हैं
मेरी पायल के घुंघरूओं से लेकर
मेरी सांसों की सरगम तक
और प्रेम यदि कविता नहीं
तो क्यों पढ़ लेता है हर शख्स
तुम्हें कभी मेरी आंखों में
कभी मेरे लफ़्ज़ों में
गीली मिट्टी पर फिरती
उंगलियों से लेकर
असीम आकाश की ओर उठते
मेरे दो हाथ
क्यों तुम्हें ही लिखते हैं
हाँ, तुम प्रेम हो
तुम ही प्रेम हो
जो बरबस ही उतर जाते हो मेरी आत्मा में भी
......और मेरी कविताओं में भी।

नाम - भावना विशाल
पिता - स्व.श्री सुरेश चंद्र मिश्रा
माता - स्व.श्रीमती कुसुम मिश्रा
जन्मस्थान - जोधपुर, राजस्थान
वर्तमान निवास - हनुमानगढ, राजस्थान
शिक्षा - एम.ए.(अंग्रेजी), एम.ए.(भूगोल), एम.एस.सी.(कम्प्यूटर विज्ञान), बी.एड., इंजीनियरिंग डिप्लोमा (इलैक्ट्रिक ब्रांच)
पेशा - शिक्षक
वर्तमान में मां हिन्दी और उर्दू लहजे की गजल, कविता, कहानी लेखन में प्रयासरत। राजस्थान के उत्तरी जिले हनुमानगढ में माध्यमिक शिक्षा विभाग, राजस्थान में वरिष्ठ अध्यापक के रूप में सेवारत
रचनायें - कुछ साझा काव्य संकलन
मासिक पत्रिकाओं में समय समय पर रचनाओं का प्रकाशन
सम्मान - शाश्वत श्रृंगारिक सम्मान, अनुभव साहित्य सम्मान
अन्तरा शब्दशक्ति प्रकाशन 'कलम के सिपाही सम्मान',
लोकप्रिय रचनाकार सम्मान, साहित्य सेवी सम्मान,
स्टोरी मिरर हिन्दी - 'मेरी उड़ान' विजेता सम्मान
प्रखर गूंज प्रकाशन - देश रत्न सम्मान
ई मेल - vb8146@gmail.com

हिन्द व हिन्दी का सम्मान, है प्रमाण देशभक्ति का.. आइए करें सृजन, शब्द से शक्ति का...

15, नेहरु चौक, मेन रोड वारासिवनी, जिला – बालाघाट (म.प्र.), पिन 481331, मो. – 9424765259, ईमेल – antrashabdshakti@gmail.com

पं.क्र. (04/21/05/207665/19)
अन्तरा शब्दशक्ति

अन्तरा शब्दशक्ति के लिंक्स
Website:- www.antrashabdshakti.com
Facebook page:- https://www.facebook.com/antrashabdshakti/
Fecbook group:- https://www.facebook.com/groups/antraashabdshakti/

978-93-5372-246-3

मूल्य 250/–